UP Board Notes for Class 10 Hindi Chapter 1 सूरदास (काव्य-खण्ड)

पद्यांशों की सुन्दर्भ व्याख्या

प्रश्न 1.
चरन-कमल बंद हरि राई ।।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंधै, अंधे कौ सब कुछ दरसाई॥
बहिरौ सुनै, गैंग पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराई ।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार-बार बंद तिहिं पाई ॥ **[2012, 15, 17]**
उत्तर
[हरि राई = श्रीकृष्ण पंगु = लँगड़ा। लंधै = लाँघ लेता है। गैंग = पूँगा। रंक = दरिद्र। पाई = चरण।।
सन्दर्भ-यह पद्य श्री सूरदास द्वारा रचित 'सूरसागर' नामक ग्रन्थ से हमारी पाठ्य-पुस्तक 'हिन्दी के 'काव्य-खण्ड' में संकलित 'पद' शीर्षक से उद्धृत है।
[विशेष—इस पाठ के शेष सभी पद्यांशों की व्याख्या में यही सन्दर्भ प्रयुक्त होगा।]

प्रसंग-इस पद्य में भक्त कवि सूरदास जी ने श्रीकृष्ण की महिमा का वर्णन करते हुए उनके चरणों की वन्दना की है। |

व्याख्या-भक्त-शिरोमणि सूरदास श्रीकृष्ण के कमलरूपी चरणों की वन्दना करते हुए कहते हैं। कि इन चरणों का प्रभाव बहुत व्यापक है। इनकी कृपा हो जाने पर लँगड़ा व्यक्ति भी पर्वतों को लाँघ लेता है। और अन्धे को सब कुछ दिखाई देने लगता है। इन चरणों के अनोखे प्रभाव के कारण बहरा व्यक्ति सुनने लगता है और गूंगा पुनः बोलने लगता है। किसी दरिद्र व्यक्ति पर श्रीकृष्ण के चरणों की कृपा हो जाने पर वह राजा बनकर अपने सिर पर राज-छत्र धारण कर लेता है। सूरदास जी कहते हैं कि ऐसे दयालु प्रभु श्रीकृष्ण के चरणों की मैं बार-बार वन्दना करता हूँ।

काव्यगत सौन्दर्य-

1. श्रीकृष्ण के चरणों का असीम प्रभाव व्यंजित है। कवि का भक्ति-भाव अनुकरणीय है।
2. भाषा-साहित्यिक ब्रज।
3. शैली-मुक्तक
4. छन्द-गेय पद।
5. रस-भक्ति।
6. शब्दशक्ति –लक्षणा।
7. गुण–प्रसाद।
8. अलंकार-चरन-कमल' में रूपक, पुनरुक्तिप्रकाश तथा अन्यत्र अनुप्रास।

प्रश्न 2.
अबिगत-गति कछु कहत न आवै ।
ज्यौं गूंगे मीठे फल को रस, अंतरगत ही भावै ॥

परम स्वाद सबही सु निरंतर, अमित तोष उपजावै ।
मन-बानी कौं अगम-अगोचर, सो जानैं जो पावै ॥
रूप-रेख-गुन जाति-जुगति-बिनु, निरालंब कित धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातें, सूर सगुन-पद गावै ॥ **[2012, 14]**

उत्तर

[अबिगत =निराकार ब्रह्म। गति = दशा। अंतरगत = हृदय में। भावै = अच्छा लगता है। परम = बहुत अधिक। अमित = अधिक। तोष = सन्तोष। उपजावै = उत्पन्न करता है। अगम = अगम्य, पहुँच से बाहर। अगोचर = जो इन्द्रियों (नेत्रों) से न जाना जा सके। रेख = आकृति। जुगति = युक्ति। निरालंब = बिना किसी सहारे के। धावै = दौड़े। तातै = इसलिए। सगुन = सगुण ब्रह्म।]

प्रसंग–इस पद्य में सूरदास जी ने निर्गुण ब्रह्म की उपासना में कठिनाई बताते हुए सगुण ईश्वर (कृष्ण) की लीला के गाने को ही श्रेष्ठ बताया है।

व्याख्या-सूरदास जी कहते हैं कि निर्गुण ब्रह्म का वर्णन करना अत्यन्त कठिन है। उसकी स्थिति के विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। निर्गुण ब्रह्म की उपासना का आनन्द किसी भक्त के लिए उसी प्रकार अवर्णनीय है, जिस प्रकार गूंगे के लिए मीठे फल का स्वाद। जिस प्रकार पूँगा व्यक्ति मीठे फल के स्वाद को कहकर नहीं प्रकट कर सकता, वह मन-ही-मन उसके आनन्द का अनुभव किया करता है, उसी प्रकार निर्गुण ब्रह्म की भक्ति के आनन्द का केवल अनुभव किया जा सकता है, उसे वाणी द्वारा प्रकट नहीं किया जा सकता। यद्यपि निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति से निरन्तर अत्यधिक आनन्द प्राप्त होता है और उपासक को उससे असीम सन्तोष भी प्राप्त होता है, परन्तु वह प्रत्येक की सामर्थ्य से बाहर की बात है। उसे इन्द्रियों से नहीं जाना जा सकता। निर्गुण ब्रह्म का न कोई रूप है, न कोई आकृति, न उसकी कोई निश्चित विशेषता है, न जाति और न वह किसी युक्ति से प्राप्त किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में भक्त का मन बिना किसी आधार के कहाँ भटकता रहेगा? क्योंकि निर्गुण ब्रह्म सभी प्रकार से पहुँच के बाहर है। इसी कारण सभी प्रकार से विचार करके ही सूरदास जी ने सगुण श्रीकृष्ण की लीला के पद गाना अधिक उचित समझा है।

काव्यगत सौन्दर्य

1. निराकार ईश्वर की उपासना को कठिन तथा साकार की उपासना को तर्कसहित सरल बताया गया है।
2. भाषा-साहित्यिक ब्रज।
3. शैली-मुक्तक
4. छन्द-गेय पद।
5. रस-भक्ति और शान्त।
6. लंकार-'अगम-अगोचर' तथा 'जाति-जुगति' में अनुप्रास, 'ज्यौ गूंग ..... उपजावै' में दृष्टान्त तथा 'सब विधि ..... पद गावै' में हेतु अलंकार है।
7. शब्दशक्ति-लक्षणा।
8. गुण–प्रसाद।
9. वसाम्य-कबीर ने लिखा है-गूंगे केरी सर्करा, खाक और मुसकाई। तुलसीदास जी ने भी निर्गुण ब्रह्म का वर्णन करते हुए कहा है

बिनु पग चले सुनै बिनु काना, कर बिनु कर्म करै बिधि नाना ।
आनन रहित सकल रस भोगी, बिनु पानी वक्ता बड़ जोगी ॥

https://www.evidyarthi.in/

प्रश्न 3.
किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत ।।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन, बिम्ब पकरिबैं धावत ॥
कबहुँ निरखि हरि आपु छाँह कौं, कर सौं पकरने चाहत ।
किलकि हँसत राजत द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिं अवगाहत ॥
कनक-भूमि पर कर-पग छाया, यह उपमा इक राजति ।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति ।।
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति ।
अँचरा तर लै ढाँकि, सूर के प्रभु को दूध पियावति ॥

उत्तर
[मनिमय = मणियों से युक्त। कनक = सोना। पकरिबैं = पकड़ने को। धावत = दौड़ते हैं। निरखि = देखकर। राजत = सुशोभित होती हैं। दतियाँ = छोटे-छोटे दाँत। तिहिं = उनको। अवगाहत = पकड़ते हैं। कर-पग = हाथ और पैर। राजति शोभित होती है। बसुधा = पृथ्वी। बैठकी = आसन। साजति = सजाती हैं। अँचरा तर = आँचल के नीचे।]

प्रसंग—इस पद में कवि ने मणियों से युक्त आँगन में घुटनों के बल चलते हुए बालक श्रीकृष्ण की शोभा का वर्णन किया है।

व्याख्या-श्रीकृष्ण के सौन्दर्य एवं बाल-लीलाओं का वर्णन करते हुए सूरदास जी कहते हैं कि . बालक कृष्ण अब घुटनों के बल चलने लगे हैं। राजा नन्द का आँगन सोने का बना है और मणियों से जटित है। उस आँगन में श्रीकृष्ण घुटनों के बल चलते हैं तो किलकारी भी मारते हैं और अपना प्रतिबिम्ब पकड़ने के लिए दौड़ते हैं। जब वे किलकारी मारकर हँसते हैं तो उनके मुख में दो दाँत शोभा देते हैं। उन दाँतों के प्रतिबिम्ब को भी वे पकड़ने का प्रयास करते हैं। उनके हाथ-पैरों की छाया उस सोने के फर्श पर ऐसी प्रतीत होती है, मानो प्रत्येक मणि में उनके बैठने के लिए पृथ्वी ने कमल का आसन सजा दिया है अथवा प्रत्येक मणि पर उनके कमल जैसे हाथ-पैरों का प्रतिबिम्ब पड़ने से ऐसा लगता है कि पृथ्वी पर कमल के फूलों का आसन बिछा हुआ हो। श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं को देखकर माता यशोदा जी बहुत आनन्दित होती हैं और बाबा नन्द को भी बार-बार वहाँ बुलाती हैं। इसके बाद माता यशोदा सूरदास के प्रभु बालक कृष्ण को अपने आँचल से ढककर दूध पिलाने लगती हैं।

काव्यगत सौन्दर्य

1. प्रस्तुत पद में श्रीकृष्ण की सहज स्वाभाविक हाव-भावपूर्ण बाल-लीलाओं का सुन्दर और मनोहारी चित्रण हुआ है।
2. भाषा-सरस मधुर ब्रज।
3. शैली-मुक्तक।
4. छन्द– गेय पद।
5. रस-वात्सल्य।
6. शब्दशक्ति-'करि करि प्रति-पद प्रति-मनि बसुधा, कमल बैठकी साजति' में लक्षणा।
7. गुण–प्रसाद और माधुर्य
8. अलंकार-'किलकत कान्ह', 'दै दतियाँ', 'प्रतिपद प्रतिमनि' में अनुप्रास, 'कमल-बैठकी' में रूपक, 'करि-करि', 'पुनि-पुनि' में पुनरुक्तिप्रकाश।
9. भावसाम्य-तुलसीदास ने भी भगवान् श्रीराम के बाल रूप की कुछ ऐसी ही झाँकी प्रस्तुत की है

आँगन फिरत घुटुरुवनि धाये।।
नील जलज-तनु-स्याम राम सिसु जननि निरख मुख निकट बोलाये ॥

प्रश्न 4.
मैं अपनी सब गाई चरैहौं।
प्रात होत बल कैं संग जैहौं, तेरे कहैं न रैहौं ॥
ग्वाल बाल गाइनि के भीतर, नैकहुँ डर नहिं लागत ।
आजु न सोव नंद-दुहाई, रैनि रहौंगौ जागत ॥ और ग्वाल सब गाई चरैहैं, मैं घर बैठो रैहौं ।
सूर स्याम तुम सोइ रहौ अब, प्रात जान मैं दैहौं ।
उत्तर
[जैहौं = जाऊँगा। गाइनि = गायों के। नैकहुँ = थोड़ा-भी। सोइ रहौ = सो जाओ। जान मैं दैहौं = मैं जाने देंगी।]

प्रसंग–इस पद में बालक श्रीकृष्ण की माता यशोदा से किये जा रहे स्वाभाविक बाल-हठ का वर्णन किया गया है।

व्याख्या-श्रीकृष्ण अपनी माता यशोदा से हठ करते हुए कहते हैं कि हे माता! मैं अपनी सब गायों को चराने के लिए वन में जाऊँगा। प्रात: होते ही मैं अपने बड़े भाई बलराम के साथ गायें चराने चला जाऊँगा और तुम्हारे रोकने पर भी न रुकेंगा। मुझे ग्वाल-बालों और गायों के बीच में रहते हुए जरा भी भय नहीं लगता। मैं नन्द बाबा की कसम खाकर कहता हूँ कि आज रात्रि में सोऊँगा भी नहीं, मैं रातभर जागता ही रहूंगा।
कहीं ऐसा न हो कि सवेरा होने पर मेरी आँखें ही न खुलें और मैं गायें चराने न जा सकें। हे माता! ऐसा नहीं हो सकता कि सब ग्वाले तो गायें चराने चले जायें और मैं अकेला घर पर बैठा रहूँ। सूरदास जी कहते हैं कि बालक श्रीकृष्ण की बात सुनकर माता यशोदा उनसे कहती हैं कि मेरे लाल! अब तुम निश्चिन्त होकर सो जाओ। प्रात:काल मैं तुम्हें गायें चराने के लिए अवश्य जाने देंगी।

काव्यगत सौन्दर्य-

1. प्रस्तुत पद्य में गायें चराने जाने के लिए किये गये श्रीकृष्ण के बाल-हठ का सुन्दर और मनोहारी वर्णन हुआ है।
2. भाषा-सरस और सुबोध ब्रज।
3. शैली-मुक्तक।
4. छन्द-गेय पद।
5. रसवात्सल्य।
6. अलंकार-अनुप्रास।
7. गुण-माधुर्य।

प्रश्न 5.
मैया हौं न चरैहौं गाइ।
सिगरे ग्वाल घिरावत मोसों, मेरे पाईं पिराइ ॥
जौं न पत्याहि पूछि बलदाउहिं, अपनी सौंहँ दिवाइ ।
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि, गारी देति रिसाइ ॥
मैं पठेवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ ।
सूर स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ ॥ **[2009]**

https://www.evidyarthi.in/

उत्तर
[हौं = मैं। सिगरे = सम्पूर्ण। पिराई = पीड़ा। पत्याहि = विश्वास। सौंहें = कसम। रिसाइ = गुस्सा।। ।। पठवति = भेजती हूँ। रिंगाइ = दौड़ाकर।]

प्रसंग-इस पद में श्रीकृष्ण माता यशोदा से ग्वाल-बालों की शिकायत करते हुए कह रहे हैं कि वे अब गाय चराने के लिए नहीं जाएँगे। |

व्याख्या-बाल-स्वभाव के अनुरूप श्रीकृष्ण माता यशोदा से कहते हैं कि हे माता! मैं अब गाय चराने नहीं जाऊँगा। सभी ग्वाले मुझसे ही अपनी गायों को घेरने के लिए कहते हैं। इधर से उधर दौड़तेदौड़ते मेरे पाँवों में पीड़ा होने लगी है। यदि तुम्हें मेरी बात का विश्वास न हो तो बलराम को अपनी सौगन्ध दिलाकर पूछ लो। यह सुनकर माता यशोदा ग्वाल-बालों पर क्रोध करती हैं और उन्हें गाली देती हैं। सूरदास जी कहते हैं कि माता यशोदा कह रही हैं कि मैं तो अपने पुत्र को केवल मन बहलाने के लिए वन में भेजती हूँ और ये ग्वाल-बाल उसे इधर-उधर दौड़ाकर परेशान करते रहते हैं।

काव्यगत सौन्दर्य

1. प्रस्तुत पद में बालक कृष्ण की दु:ख भरी शिकायत और माता यशोदा का ममता प्रेरित क्रोध-दोनों का बहुत ही स्वाभाविक चित्रण किया गया है। निश्चित ही सूरदास जी बाल मनोविज्ञान को जानने वाले कवि हैं।
2. भाषा-सरल और स्वाभाविक ब्रज।
3. शैली-मुक्तक।
4. छन्द-गेय पद।
5. रसवात्सल्य
6. शब्दशक्ति–अभिधा।
7. अलंकार-'पाइँ पिराइ तथा 'सूर स्याम' में अनुप्रास।
8. गुण-माधुर्य।।

प्रश्न 6.
सखी री, मुरली लीजै चोरि ।
जिनि गुपाल कीन्हें अपनें बस, प्रीति सबनि की तोरि ॥
छिन इक घर-भीतर, निसि-बासर, धरतन कबहूँ छोरि।
कबहूँ कर, कबहूँ अधरनि, कटि कबहूँ खोंसत जोरि ॥
ना जानौं कछु मेलि मोहिनी, राखे अँग-अँग भोरि ।
सूरदास प्रभु को मन सजनी, बँध्यौ राग की डोरि ॥
उत्तर
[छिन इक = एक क्षण । निसि-बासर = रात-दिन। कर = हाथ। कटि = कमर। खोंसत = लगी लेते हैं। मोहिनी = जादू डालकर। भोरि = भुलावा। राग = प्रेम।]

प्रसंग-इस पद में सूरदास जी ने वंशी के प्रति गोपियों के ईष्य-भाव को व्यक्त किया है।

व्याख्या-गोपियाँ श्रीकृष्ण की वंशी को अपनी वैरी सौतन समझती हैं। एक गोपी दूसरी गोपी से कहती है कि हे सखी! अब हमें श्रीकृष्ण की यह मुरली चुरा लेनी चाहिए; क्योंकि इस मुरली ने गोपाल को अपनी ओर आकर्षित कर अपने वश में कर लिया है और श्रीकृष्ण ने भी मुरली के वशीभूत होकर हम सभी को भुला दिया है। कृष्ण घर के भीतर हों या बाहर, कभी क्षणभर को भी मुरली नहीं छोड़ते। कभी हाथ में । रखते हैं तो कभी

होंठों पर और कभी कमर में खोंस लेते हैं। इस तरह से श्रीकृष्ण उसे कभी भी अपने से दूर नहीं होने देते। यह हमारी समझ में नहीं आ रहा है कि वंशी ने कौन-सा मोहिनी मन्त्र श्रीकृष्ण पर चला दिया है, जिससे श्रीकृष्ण पूर्ण रूप से उसके वश में हो गये हैं। सूरदास जी कहते हैं कि गोपी कह रही है कि हे सजनी ! इस वंशी ने श्रीकृष्ण का मन प्रेम की डोरी से बाँध कर कैद कर लिया है।

काव्यगत सौन्दर्य-

1. प्रेम में प्रिय पात्र के दूसरे प्रिय के प्रति ईष्र्या का भाव होना एक स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक तथ्य है। इसी तथ्य का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया गया है।
2. भाषा–सहज-सरल ब्रजी
3. शैली-मुक्तक और गीतात्मक।
4. छन्द-गेय पद।
5. रस-श्रृंगार।
6. शब्दशक्ति– 'बँध्यौ राग की डोरि' में लक्षणा।
7. गुण-माधुर्य।
8. अलंकार—राग की डोरि' में रूपक तथा सम्पूर्ण पद में अनुप्रास।

प्रश्न 7.
ऊधौ मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।।
बृन्दावन गोकुल बने उपबन, सघन कुंज की छाँहीं ॥
प्रात समय माता जसुमति अरु नंद देखि सुख पावत ।
माखन रोटी दह्यौ सजायौ, अति हित साथ खवावत ॥
गोपी ग्वाले बाल सँग खेलत, सब दिन हँसत सिरात ।
सूरदास धनि-धनि ब्रजवासी, जिनस हित जदु-तात ॥ **[2010, 11, 13, 17]**
उत्तर
[बिसरत = भूलना। सघन = गहन। कुंज = छोटे वृक्षों का समूह। छाँहीं = छाया। दह्यौ = दही। सजायौ = सजा हुआ, सहित। हित = स्नेह, प्रेम। सिरात = बीत जाना। जदु-तात = कृष्ण।]

प्रसंग-प्रस्तुत पद में उद्धव ने मथुरा पहुँचकर श्रीकृष्ण को वहाँ की सारी स्थिति बतायी, जिसे सुनकर श्रीकृष्ण भाव-विभोर हो गये। इस पर वे उद्धव से अपनी मनोदशा व्यक्त करते हैं।

व्याख्या-श्रीकृष्ण ने उद्धव से ब्रजवासियों की दीन दशा सुनी और उन्हीं के ध्यान में खो गये। वे उद्धव से कहते हैं कि मैं ब्रज को भूल नहीं पाता हूँ। वृन्दावन और गोकुल के वन-उपवन संभी मुझे याद आते रहते हैं। वहाँ के घने कुंजों की छाया को भी मैं भूल नहीं पाता। नन्द बाबा और यशोदा मैया को देखकर मुझे जो सुख मिलता था, वह मुझे रह-रहकर स्मरण हो आता है। वे मुझे मक्खन, रोटी और भली प्रकार जमाया हुआ दही कितने प्रेम से खिलाते थे ? ब्रज की गोपियों और ग्वाल-बालों के साथ खेलते हुए मेरे सभी दिन हँसते हुए बीता करते थे। ये सभी बातें मुझे बहुत याद आती हैं। सूरदास जी ब्रजवासियों को धन्य मानते हैं। और उनके भाग्य की सराहना करते हैं; क्योंकि श्रीकृष्ण को उनके हित की चिन्ता है और श्रीकृष्ण इन ब्रजवासियों को प्रति क्षण ध्यान करते हैं।

काव्यगत सौन्दर्य-

https://www.evidyarthi.in/

1. यद्यपि कृष्ण का व्यक्तित्व अलौकिक है किन्तु प्रेमवश वह भी प्रियजनों की याद में साधारण मनुष्य की भाँति द्रवित हो रहे हैं। ब्रज की स्मृति उन्हें अत्यधिक भाव-विह्वल कर रही है।
2. भाषा-सरल-सरस ब्रज।
3. शैली-मुक्तक।
4. छन्द-गेय पदः
5. रस-शृंगार।
6. शब्दशक्ति-अभिधा और व्यंजना।
7. गुण-माधुर्य।
8. अलंकार-'ब्रज बिसरत', बृन्दाबन गोकुल बन उपबन' में अनुप्रास, उद्धव के द्वारा योग का सन्देश भेजने तथा यह कहने में कि 'मुझसे ब्रज नहीं भूलता' में विरोधाभास है।
9. भावसाम्य–यही भाव रत्नाकर जी ने इस प्रकार व्यक्त किया है

सुधि ब्रजवासिनी की, दिवैया सुखरासिनी की,
उधौ नित हमकौं बुलावन कौं आवती।

प्रश्न 8.
ऊधौ मन न भये दस बीस।।
एक हुतौ सो गयौ स्याम सँग, कौ अवराधै ईस ॥
इंद्री सिंथिल भई केसव बिनु, ज्यौं देही बिनु सीस।
आसा लागि रहति तन स्वासा, जीवहिं कोटि बरीस ॥
तुम तौ सखा स्याम सुन्दर के, सकल जोग के इंस। सूर हमारें नंद-नंदन बिनु, और नहीं जगदीस ॥ **[2011, 13, 17]**

उत्तर
[हुतौ = हुआ करता था। अवराधै = आराधना करे। ईस = निर्गुण ब्रह्म। देही = शरीरधारी। बरीस = वर्ष। सखा = मित्र। जोग के ईस = योग के ज्ञाता, मिलन कराने में निपुण।]

प्रसंग–प्रस्तुत पद भ्रमर-गीत प्रसंग का एक सरस अंश है। श्रीकृष्ण के मथुरा चले जाने पर गोपियाँ अत्यधिक व्याकुल हैं। उद्धव जी गोपियों को योग का सन्देश देने मथुरा से गोकुल आये हैं। गोपियाँ योग की शिक्षा ग्रहण करने में अपने को असमर्थ बताती हैं और अपनी मनोव्यथा को उद्धव के समक्ष व्यक्त करती हैं।

व्याख्या-गोपियाँ उद्धव जी से कहती हैं कि हे उद्धव! हमारे मन दस-बीस नहीं हैं। सभी की तरह हमारे पास भी एक मन था और वह श्रीकृष्ण के साथ चला गया है; अत: हम मन के बिना तुम्हारे बताये गये निर्गुण ब्रह्म की आराधना कैसे करें? अर्थात् बिना मन के ब्रह्म की आराधना सम्भव नहीं है। श्रीकृष्ण के बिना हमारी सारी इन्द्रियाँ निष्क्रिय हो गयी हैं और हमारी दशा बिना सिर के प्राणी जैसी हो गयी है। हम कृष्ण के बिना मृतवत् हो गयी हैं, जीवन के लक्षण के रूप में हमारी श्वास केवल इस आशा में चल रही है कि श्रीकृष्ण मथुरा से अवश्य लौटेंगे और हमें उनके दर्शन प्राप्त हो जाएँगे। श्रीकृष्ण के लौटने की आशा के सहारे तो हम करोड़ों वर्षों तक जीवित रह लेंगी। गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि हे उद्धव! तुम तो कृष्ण के अभिन्न मित्र हो और सम्पूर्ण योग-विद्या तथा मिलन के उपायों के ज्ञाता हो। यदि तुम चाहो तो हमारा योग (मिलन) अवश्य करा सकते हो। सूरदास जी कहते हैं कि गोपियाँ उद्धव से कह रही हैं कि हम तुम्हें यह स्पष्ट बता देना चाहती हैं कि नन्द जी के पुत्र श्रीकृष्ण को छोड़कर हमारा कोई आराध्य नहीं है। हम तो उन्हीं की परम उपासिका हैं।।

काव्यगत सौन्दर्य-

(1) प्रस्तुत पद में गोपियों की विरह दशा और श्रीकृष्ण के प्रति उनके एकनिष्ठ प्रेम का मार्मिक वर्णन है।
(2) भाषा-सरल, सरस और मधुर ब्रज।
(3) शैली–उक्ति वैचित्र्यपूर्ण मुक्तक।
(4) छन्द-गेय पद।
(5) रस-श्रृंगार रस (वियोग)।
(6) अलंकार-'सखा स्याम सुन्दर के' में अनुप्रास 'जोग' में श्लेष तथा 'ज्यौं देही बिनु सीस' में उपमा
(7) गुण-माधुर्य।
(8) शब्दशक्ति–व्यंजना।
(9) इन्द्रियाँ दस होती हैं–

1. **पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ–**
    - नासिका,
    - रसना,
    - नेत्र,
    - त्वचा,
    - श्रवण;
2. **पाँच कर्मेन्द्रियाँ–**
    - हाथ,
    - पैर,
    - वाणी,
    - गुदा,
    - लिंग।

(10) एकनिष्ठ प्रेम का ऐसा ही भाव तुलसीदास ने भी व्यक्त किया है

एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास।
एक राम घनस्याम हित, चातक तुलसीदास ॥

प्रश्न 9.
ऊधौ जाहु तुमहिं हम जाने।
स्याम तुमहिं स्याँ कौं नहिं पठयौ, तुम हौ बीच भुलाने ॥
ब्रज नारिनि सौं जोग कहत हौ, बात कहत न लजाने ।
बड़े लोग न बिबेक तुम्हारे, ऐसे भए अयाने ॥
हमसौं कही लई हम सहि कै, जिय गुनि लेह सयाने ।
कहँ अबला कहँ दसा दिगंबर, मष्ट करौ पहिचाने ॥
साँच कहाँ तुमक अपनी सौं, बूझति बात निदाने ।
सूर स्याम जब तुमहिं पठायौ, तब नैकहुँ मुसकाने ।
उत्तर
[पठयौ = भेजा है। अयाने = अज्ञानी। दिगंबर = दिशाएँ ही जिसके वस्त्र हैं; अर्थात् नग्न। मष्ट करौ = चुप हो जाओ। सौं = सौगन्ध। निदाने = आखिर में नैकहूँ = कुछ।]

https://www.evidyarthi.in/

प्रसंग-इस पद में गोपियाँ उद्धव के साथ परिहास करती हैं और कहती हैं कि श्रीकृष्ण ने तुम्हें यहाँ नहीं भेजा है, वरन् तुम अपना मार्ग भूलकर यहाँ आ गये हो या श्रीकृष्ण ने तुम्हें यहाँ भेजकर तुम्हारे साथ मजाक किया है।

व्याख्या-गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि तुम यहाँ से वापस चले जाओ। हम तुम्हें समझ गयी हैं। श्याम ने तुम्हें यहाँ नहीं भेजा है। तुम स्वयं बीच से रास्ता भूलकर यहाँ आ गये हो। ब्रज की नारियों से योग की बात करते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आ रही है। तुम बुद्धिमान् और ज्ञानी होगे, परन्तु हमें ऐसा लगता है कि तुममें विवेक नहीं है, नहीं तो तुम ऐसी अज्ञानतापूर्ण बातें हमसे क्यों करते? तुम अच्छी प्रकार मन में विचार लो कि हमसे ऐसा कह दिया तो कह दिया, अब ब्रज में किसी अन्य से ऐसी बात न कहना। हमने तो सहन भी कर लिया, कोई दूसरी गोपी इसे सहन नहीं करेगी। कहाँ तो हम अबला नारियाँ और कहाँ योग की नग्न अवस्था, अब तुम चुप हो जाओ और सोच-समझकर बात कहो। हम तुमसे एक अन्तिम सवाल पूछती हैं, सच-सच बताना, तुम्हें अपनी कसम है, जो तुम सच न बोले। सूरदास जी कहते हैं कि गोपियाँ उद्धव से पूछ रही हैं कि जब श्रीकृष्ण ने उनको यहाँ भेजा था, उस समय वे थोड़ा-सा मुस्कराये थे या नहीं ? वे अवश्य मुस्कराये होंगे, तभी तो उन्होंने तुम्हारे साथ उपहास करने के लिए तुम्हें यहाँ भेजा है।

काव्यगत सौन्दर्य-

1. यहाँ गोपियों की तर्कशीलता और आक्रोश का स्वाभाविक चित्रण हुआ है। गोपियाँ अपनी तर्कशक्ति से उद्धव को परास्त कर देती हैं और गोकुल आने के उनके उद्देश्य को ही समाप्त कर देती हैं।
2. यहाँ नारी-जाति के सौगन्ध खाने और खिलाने के स्वभाव का यथार्थ अंकन हुआ है।
3. भाषा-सरल-सरस ब्रज।
4. शैली-मुक्तक।
5. छन्द-गेय पद।
6. रस-श्रृंगार।
7. अलंकार-'दसा दिगंबर' में अनुप्रास।
8. गुण-माधुर्य।
9. शब्दशक्ति–व्यंजना की प्रधानता।
10. भावसाम्य–प्रेम के समक्ष ज्ञान-ध्यान व्यर्थ है। कवि कोलरिज ने भी लिखा है-"समस्त भाव, विचार व सुख प्रेम के सेवक हैं।"

प्रश्न 10.
निरगुन कौन देस कौ बासी ?
मधुकर कहि समुझाइ सौंह दै, बुझति साँच न हाँसी ॥
को है जनक, कौन है जननी, कौन नारि, को दासी ?
कैसे बरन, भेष है कैसौ, किहिं रस मैं अभिलाषी ?
पावैगौ पुनि कियौ आपनौ, जौ रे करैगौ गाँसी ।
सुनत मौन है रह्यौ बावरी, सूर सबै मति नासी ॥ **[2009, 12, 14, 17]**

उत्तर
[मधुकर = भ्रमर, किन्तु यहाँ उद्धव के लिए प्रयोग हुआ है। सौंह = शपथ। साँच = सत्य। हाँसी = हँसी। जनक = पिता। बरन = रंग, वर्ण। गाँसी = छल-कपट। बावरी = बावला, पागल। नासी = नष्ट हो गयी।]

प्रसंग-इस पद में सूरदास ने गोपियों के माध्यम से निर्गुण ब्रह्म की उपासना का खण्डन तथा सगुण कृष्ण की भक्ति का मण्डन किया है।

व्याख्या-गोपियाँ 'भ्रमर' की अन्योक्ति से उद्धव को सम्बोधित करती हुई पूछती हैं कि हे उद्धव! तुम यह बताओ तुम्हारा वह निर्गुण ब्रह्म किस देश का रहने वाला है? हम तुमको शपथ दिलाकर सच-सच पूछ रही हैं, कोई हँसी (मजाक) नहीं कर रही हैं। तुम यह बताओ कि उस निर्गुण का पिता कौन है? उसकी माता का क्या नाम है? उसकी पत्नी और दासियाँ कौन-कौन हैं? उस निर्गुण ब्रह्म का रंग कैसा है, उसकी वेश-भूषा कैसी है और उसकी किस रस में रुचि है? गोपियाँ उद्धव को चेतावनी देती हुई कहती हैं कि हमें सभी बातों का ठीक-ठीक उत्तर देना। यदि सही बात बताने में जरा भी छल-कपट करोगे तो अपने किये का फल अवश्य पाओगे। सूरदास जी कहते हैं कि गोपियों के ऐसे प्रश्नों को सुनकर ज्ञानी उद्धव ठगे-से रह गये और उनका सारा ज्ञान-गर्व अनपढ़ गोपियों के सामने नष्ट हो गया।

काव्यगत सौन्दर्य-

1. सगुणोपासक सूर ने गोपियों के माध्यम से निर्गुण ब्रह्म का उपहासपूर्वक खण्डन कराया है।
2. गोपियों के प्रश्न सीधे-सादे होकर भी व्यंग्यपूर्ण हैं। यहाँ कवि की कल्पना-शक्ति और स्त्रियों की अन्योक्ति में व्यंग्य करने की स्वभावगत प्रवृत्ति का बड़ा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है।
3. भाषा-सरल ब्रज।
4. शैली-मुक्तक।
5. रस-वियोग श्रृंगार एवं हास्य।
6. छन्द–गेय पद।
7. गुण-माधुर्य।
8. अलंकार–'समुझाइ सौंह दै', 'पावैगौ पुनि' में अनुप्रास, मानवीकरण तथा 'मधुकर' के माध्यम से उद्धव को सम्बोधन करने में अन्योक्ति।

प्रश्न 11.
सँदेसौ देवकी सौं कहियौ ।
हौं तो धाइ तिहारे सुत की, दया करत ही रहियौ ॥
जदपि टेव तुम जानति उनकी, तऊ मोहिं कहि आवै ।।
प्रात होत मेरे लाल लडैडौँ, माखन रोटी भावै ॥
तेल उबटनौ अरु तातो जल, ताहि देखि भजि जाते ।
जोइ-जोइ माँगत सोइ-सोइ देती, क्रम-क्रम करि कै न्हाते ॥
सूर पथिक सुन मोहिं रैनि दिन, बढ्यौ रहत उर सोच ।
मेरौ अलक लडैतो मोहन, हैहै करत सँकोच ॥ **[2009]**

उत्तर
[धाइ = आया, सेविका। टेव = आवत। लडैतें = लाड़ले। तातो = गर्म। क्रम-क्रम = धीरे-धीरे। रैनि = रात। उर = हृदय। अलक लड़तो = दुलारे।]

प्रसंग-श्रीकृष्ण के मथुरा चले जाने पर माता यशोदा बहुत दु:खी हो जाती हैं। उनके मन में विभिन्न आशंकाएँ और चिन्ताएँ होने लगती हैं। प्रस्तुत पद में देवकी को सन्देश भेजते समय वह अपने मन की पीड़ा को व्यक्त कर रही हैं।

https://www.evidyarthi.in/

व्याख्या-यशोदा जी श्रीकृष्ण की माता देवकी को एक पथिक द्वारा सन्देश भेजती हैं कि कृष्ण तुम्हारा ही पुत्र है, मेरा पुत्र नहीं है। मैं तो उसका पालन-पोषण करने वाली मात्र एक सेविका हूँ। पर वह मुझे मैया कहता रहा है, इसलिए मेरा उसके प्रति वात्सल्य भाव स्वाभाविक है। यद्यपि तुम उसकी आदतें तो जानती ही होगी, फिर भी मेरा मन तुमसे कुछ कहने के लिए उत्कण्ठित हो रहा है। सवेरा होते ही मेरे लाड़ले श्रीकृष्ण को माखन-रोटी अच्छी लगती है। वह तेल, उबटन और गर्म पानी को पसन्द नहीं करता था, अत: इन वस्तुओं को देखकर ही भाग जाता था। उस समय वह जो कुछ माँगता था, वही उसे देती थी, तब वह धीरे-धीरे नहाता था। सूरदास जी कहते हैं कि यशोदा पथिक से अपने मन की दशा व्यक्त करती हुई कहती हैं कि मुझे तो रात-दिन यही चिन्ता सताती रहती है कि मेरा लाड़ला श्रीकृष्ण अभी तुमसे कुछ माँगने में बहुत संकोच करता होगा।

काव्यगत सौन्दर्य-

1. माता के वात्सल्य भाव का सरसे वर्णन हुआ है।
2. यहाँ कवि ने बाल मनोविज्ञान की सुन्दर अभिव्यक्ति की है कि बच्चे अपरिचित स्थान पर किसी चीज की इच्छा होते हुए भी संकोच के कारण चुप रह जाते हैं, जबकि अपने घर पर जिद कर लेते हैं।
3. भाषा-सरल-सरस ब्रज।
4. शैली-मुक्तक।
5. छन्द-गेय पद।
6. रसवात्सल्य।
7. शब्दशक्ति–व्यंजना।
8. गुणमाधुर्य।
9. अलंकार-'लाल लड़तें' में अनुप्रास तथा 'जोइ-जोइ', 'सोइ-सोइ', 'क्रम-क्रम में पुनरुक्तिप्रकाश।